**(नोट्स- स्नातक सेमेस्टर–2, MJC-2 संस्कृत UNIT-2 रघुवंशम् (प्रथम सर्ग)**

# ***महाकवि कालिदास का जीवन परिचय एवं रचनाएँ***

महाकवि कालिदास संस्कृत साहित्य के कनिष्ठिकाधिष्ठित कवि हैं। इन्होंने अपनी रचनाओं से सहृदय हृदय को जितना आप्लावित किया है सम्भवतः अन्य कवि नहीं कर पाये। वह रसराज श्रृङ्गार के उभयपक्षों के उन्मीलन में दक्ष है। वैदर्भी जैसा सरस एवं सुगम मार्ग का आश्रय लेकर उपमा अलंकार का नैसर्गिक प्रयोग कर बड़े से बड़े विद्वानों आलोचकों एवं सहृदयों के मनमन्दिर में जो कवित्व का दिव्य स्वरूप स्थापित किया है वह अद्भुत है। उनकी कारयित्री प्रतिभा के वशीभूत होकर कोई उन्हे कविता कामिनी का विलास बतलाता है तो कोई उनकी वाणी को नलिनी की तरह अस्पृष्टदोषा सिद्ध करता है। कवि के सन्दर्भ में यह भणिति अतिशयोक्ति नहीं है –

पुरा कवीनां गणनाप्रसंगे कनिष्ठिकाधिष्ठितकालिदासः।

अद्यापि तत्तुल्यकवेरभावादनामिका सार्थवती बभूव॥

महाकवि कालिदास रचनाओं में नाट्यकला की सुन्दरता हो काव्य की वर्णनछटा हो या फिर गीतिकाव्य के सरस हृदयोद्गार हो कालिदास की प्रतिभा सर्वातिशायिनी है। खेद की बात यह है कि उनकी रचनाओं की जितनी ख्याति मिली उनकी जीवनी तथा काल निरूपण उतना ही अंधकारमय है। अंतःसाक्ष्य और वाह्यसाक्ष्य के आधार पर जो बातें सामने आई हैं उन्हीं के आधार पर हम कालिदास को जानते व समझते हैं।

जन्मस्थान-

कालिदास के जन्मभूमि के संदर्भ में कई मत प्राप्त होते हैं कोई उन्हें बंगाल का तो कोई कश्मीर प्रदेश का सिद्ध करने की कोशिश करता है। किन्तु अन्तःसाक्ष्य मेघदूत में उज्जयिनी के प्रति कवि का विशेष पक्षपात दिखता है जब यक्ष मेघ को रास्ता टेढ़ा होने पर भी उज्जयिनी जाने का निर्देश देता है- 'वक्रः पन्था यदपि भवतः प्रस्थितस्योत्तराशां, सौधोत्सङ्गप्रणयविमुखो मा स्म भूरुज्जयिन्याः।'[1] उज्जयिनी के विशाल महलों और रमणियों के कुटिल कटाक्षों को देखने से यदि वह वञ्चित रह गया तो उसका जीवन

[1] मेघदूतम्-१/२७

निष्फल है। कालिदास ने अवन्ती प्रदेश की भौगोलिक स्थिति का सूक्ष्म वर्णन मेघदूत में किया है, वहाँ की छोटी-२ नदियों का भी नाम-निर्देश पूर्वक वर्णन किया है। उज्जयिनी के प्रति उनके विशेष पक्षपात तथा सूक्ष्म भौगोलिक परिचय के आधार पर कहा जा सकता है कि कालिदास उज्जयिनी के ही रहने वाले थे।

धर्म एवं सम्प्रदाय-

कालिदास निश्चित रूप से सनातन धर्मावलम्बी हिन्दू थे, जैसा कि उनके नाम से ही ज्ञात होता है भगवती काली का दास या भक्त। हिन्दुओं में वह शैव सम्प्रदाय को मानने वाले थे इसलिए इनकी प्रायशः रचनाओं के मंगलाचरण हो या फिर आन्तरिक वर्णन हो शिव को समर्पित होते हैं। अभिज्ञान शाकुन्तल में अष्टमूर्ति शिव की स्तुति हो 'प्रत्यक्षाभिः प्रपन्नस्तनुभिरवतु वस्ताभिरष्टाभिरीशः'[2] या फिर रघुवंशम् में जगत के माता-पिता पार्वती-परमेश्वर के रूप में शिव की वंदना-

वागर्थाविव सम्पृक्तौ वागर्थप्रतिपत्तये।

जगतः पितरौ वन्दे पार्वतीपरमेश्वरौ॥[3]

कुमारसंभव तो भगवान शिव को ही समर्पित है। मेघदूत में महाकाल की उपासना के प्रति उनका विशेष आग्रह- 'अप्यन्यस्मिञ्जलधर! महाकालमासाद्य काले, स्थातव्यं ते नयनविषयं यावदत्येति भानुः।'[4] इस तरह भगवान् शिव के प्रति विशेष भक्ति उन्हे शैव सिद्ध करने के लिए पर्याप्त है।

स्थिति-काल-

भारतीय जनश्रुति कहती है कि कालिदास उज्जयिनी के राजा विक्रमादित्य के नवरत्नों में से एक थे। कालिदास के ग्रन्थों से भी विक्रम के साथ रहने की बात सूचित होती है- अभिज्ञानशाकुन्तलम् का मञ्चन पहली बार विक्रम की अभिरूपभूयिष्ठा सभा में ही हुई थी। विक्रमोर्वशीयम् का नायक पुरुरवा होने पर भी नाटक के नाम में विक्रम का नामोल्लेख होना, इसके अतिरिक्त 'अनुत्सेकः खलु विक्रमालंकारः' आदि वाक्य का मिलना इसकी पुष्टि में सहायक होते हैं कि कालिदास का विक्रम से निश्चित रूप से कोई सम्बन्ध था।

---

[2] अभिज्ञा.-१/१

[3] रघुवंशम्-१/१

[4] मेघदूतम्-१/३४

कालिदास ने शुङ्गवंशीय राजा अग्निमित्र को अपने मालविकाग्निमित्र नाटक का नायक बनाया है। अतः वे उसके विक्रमपूर्व द्वितीय शतक के अनन्तर होंगे। सप्तम शताब्दी में हर्षवर्धन के सभा-कवि बाणभट्ट ने हर्षचरित में कालिदास की कविता की प्रशंसा की है अतः महाकवि कालिदास का काल विक्रमपूर्व द्वितीय शतक से लेकर विक्रम की सप्तम शती के बीच में कहीं होना चाहिए। कालिदास के काल के सम्बन्ध में मुख्यतया तीन मत प्रसिद्ध हैं-

क- कालिदास को षष्ट शतक का बतलाना।

ख- गुप्तकाल में कालिदास की स्थिति मानता है। (चौथी शताब्दी के शेष भाग से पाँचवी शताब्दी के पूर्वार्ध तक)

ग- विक्रम संवत् के आरम्भ में इनका समय मानता है। (ख्रीष्ट से ५७ वर्ष पूर्व)

कपिलदेव द्विवेदी ने अपने संस्कृत साहित्य के इतिहास में अनेक तर्कों के आधार पर कालिदास का काल विक्रम संवत् प्रथम शताब्दी निश्चित किया है।

कालिदास की रचनाएँ-

कालिदास की सच्ची रचनाओं का निर्णय करना आलोचकों के लिए एक दुष्कर कार्य है। काव्य जगत में कालिदास की ख्याति होने से अवान्तरकालीन अनेक कवियों ने अपने व्यक्तित्व को छुपाकर कालिदास नाम से रचना करने लगे। दशम शताब्दी के आचार्य राजशेखर ने तीन कालिदासों की सत्ता का पूर्ण संकेत किया है। फिर भी जो रचनाएँ कालिदास के नाम से स्वीकृत हो चुकी है उनका संक्षिप्त वर्णन उचित है- कालिदास की कुल सात रचानाएँ हमें प्राप्त होती हैं- दो महाकाव्य- रघुवंशम्, कुमारसम्भवम्, दो खण्डकाव्य या गीतिकाव्य- ऋतुसंहारम्, मेघदूतम्, तीन नाटक- अभिज्ञानशाकुन्तलम्, विक्रमोर्वशीयम्, मालविकाग्निमित्रम्।

ऋतुसंहारम्-

ऋतुसंहारम् कालिदास की प्रथम काव्यकृति है। विद्वानों का मन्तव्य है कि बालकवि कालिदास ने काव्यकला का आरम्भ इसी ऋतुवर्णनात्मक लघुकाव्य से किया है। छः सर्गों में विभक्त यह काव्य ग्रीष्म से आरम्भ कर वसन्त तक छहों ऋतुओं का बड़ा ही स्वाभाविक तथा सरल वर्णन प्रस्तुत करता है।

कुमारसम्भवम्-

जनार्दन कॉलेज, आगरा

कुमारसम्भवम् कालिदास की दूसरी रचना है। इसमें कवि ने कुमार कार्तिकेय के जन्म के वर्णन का संकल्प किया था, परन्तु यह महाकाव्य अधूरा ही रह गया। इसके वर्त्तमान १७ सर्गों में से आदि के ८ सर्ग ही कालिदास द्वारा निर्मित है। कालिदास के प्रसिद्ध टीकाकार मल्लिनाथ की टीका भी यहीं तक उपलब्ध होती है। इसके पंचम सर्ग में पार्वती की कठोर तपश्चर्या का वर्णन अत्यन्त उदात्त तथा ओजपूर्ण शैली में किया गया है तृतीय सर्ग में शिव-समाधि का अद्भुत वर्णन है। अष्टम सर्ग में शिव-पार्वती का रति-वर्णन इन्हें आलोचना का पात्र बना देता है। ९ से १७ सर्ग की रचना किसी साधारण कवि की है जो प्रक्षिप्त मान लिया गया है।

मेघदूतम्-

मेघदूत कालिदास की अनुपम प्रतिभा का निदर्शन है। अपने कर्तव्य के प्रति की गई असावधानी के कारण अपने स्वामी कुबेर से शापित होकर यक्ष एक वर्ष के लिए अपनी नवोढा प्रेयसी से दूर होकर रामगिरि के आश्रम में निवास करता है और ८ महीने जैसे तैसे व्यतीत करने के उपरान्त आषाढ मास में आश्लिष्टसानु मेघ को देखकर अपनी प्रियतमा के पास कुशल-क्षेम का सन्देश भेजने के लिए अधीर हो जाता है और मेघ को अपना दूत बनाकर हिमालय स्थित अलकापुरी में भेजता है। यह खण्डकाव्य या गीति काव्य माना गया है। यह दो भागो में विभक्त है पूर्वमेघ एवं उत्तरमेघ। पूर्वमेघ में कवि ने रामगिरि से अलका तक मार्ग के वर्णन के अवसर पर भारतवर्ष की प्राकृतिक सुषमा का सुन्दर वर्णन है एवं उत्तर मेघ में यक्ष का प्रेम सन्देश एवं उसके कोमल हृदय के स्वाभाविक स्नेह का नैसर्गिक सहानुभूति का चित्रण है।

रघुवंशम्-

महाकाव्यों में यह अत्यन्त श्रेष्ठ माना गया है। इसमें राजा दिलीप से लेकर अग्निवर्ण तक के इक्ष्वाकुवंश के राजाओं का चरित्रवर्णन बहुत ही प्रौढता के साथ किया गया है। इसमें कुल १९ सर्ग है। रघु के जन्म की पूर्वपीठिका से ही  इस काव्य का आरम्भ होता है २-३ सर्ग में दिलीप की गोसेवा से रघु का जन्म होता है। ४-५ सर्ग में अपने दिग्विजय एवं दानशीलता से रघु सबको चकित करते हैं। इसके बाद तीन सर्गों में इन्दुमति का स्वयंवर एवं रघुपुत्र अज से उसका विवाह एवं माला गिरने से इन्दुमति का मरण एवं अज का करुण विलाप वर्णित है। १० से १५ वें सर्ग तक रामचरित का विस्तृत वर्णन है। तेरहवें सर्ग में पुष्पक-विमान पर आरूढ राम के द्वारा भारतवर्ष के स्थलों का सुन्दर वर्णन कालिदास की प्रतिभा का परिचायक है। चौदहवें सर्ग में परित्यक्ता सीता के प्रणय-सन्देश में जो आत्मगौरव जो स्नेह भरा है वह पतिव्रता के

चरित का उत्कर्ष है। कालिदास ने 'राजा प्रकृति रञ्जनात्' कहकर राजा पद की जो व्याख्या की है वह अद्भुत है।

मालविकाग्निमित्रम्-

इसमें शुङ्गवंशीय नरेश अग्निमित्र तथा मालविका के प्रेम का सुन्दर चित्रण ऐतिहासिक पृष्ठभूमि का आश्रय लेकर बड़े ही रोचक ढंग से किया गया है। कवि ने राजाओं के अन्तःपुर की चहारदीवारी के भीतर के पनपने वाले काम, रानियों की परस्पर ईर्ष्या, राजा की कामुकता आदि का बड़ी ही चतुराई के साथ वर्णन किया है। इसका कथानक भी पाँच अङ्कों में समन्वित है।

विक्रमोर्वशीयम्-

शतपथ ब्राह्मण में उल्लिखित पुरुरवा-उर्वशी के प्रेमपूर्वक आख्यान को आधार बनाकर महाकवि ने इस पाँच अङ्कों के त्रोटक की रचना की है। पुरुरवा अत्यन्त उपकारपरायण राजा है और वह राक्षस से उर्वशी का उद्धार करता है। इसी प्रसंग में उर्वशी उसके अलौकिक रुप पर आसक्त होकर अनेक शर्तों के साथ उसकी रानी बनन स्वीकार करती है। इन्द्र की आज्ञा से जब उर्वशी पुरुरवा को छोड़कर देवलोक को चली जाती है तो पुरुरवा उसके वियोग में पागल बनकर जंगल में मारा-मारा फिरता है। कवि ने पुरुरवा के उद्दाम प्रेम का चित्रण बड़ी मार्मिकता के साथ किया है।

अभिज्ञानशाकुन्तलम्-

अभिज्ञानशाकुन्तलम् नाटक संस्कृत साहित्य में ही नहीं अपितु विश्व के उत्कृष्ट रचनाओं में परिगणित होता है। महाभारत के आदिपर्व में वर्णित शाकुन्तलोपाख्यान को आधार बनाकर कवि ने चन्द्रवंशीय राजा दुष्यन्त एवं शकुन्तला की कथा सात अङ्कों के इस महनीय नाटक में की है। पहले अंक में हस्तिनापुर का राजा दुष्यन्त आखेट करने के लिए बन में जाता हौ और संयोगवश महर्षि कण्व के आश्रम में शकुन्तलता से मिलता है। उसकी जन्मकथा सुन उसके हृदय में शकुन्तला के लिए अनुराग उत्पन्न होता है। द्वितीय अंक में ऋषियों की प्रार्थना पर आश्रम की रक्षा करने के लिए वह स्वयं वहीं रह जाता है। तृतीय अंक में राजा और शकुन्तला का समागम है। चतुर्थ अंक में कण्व तीर्थयात्रा से लौटकर आश्रम में आते हैं और आपन्नसत्त्वा शकुन्तला को शिष्यों के साथ हस्तिनापुर भेंजते हैं। वहाँ दुर्वासा ऋषि के शापवशात् दुष्यन्त शकुन्तला को पहचानने से मना करता है। एक दिव्यज्योति शकुन्तला को उठा कर ले जाती है मारीच के

आश्रम में वह अपनी माता मेनका के साथ निवास करती है। षष्ठ अंक में मछुआरे से राजा नामांकित अंगुठी मिलती है जिसे देखते ही राजा को शकुन्तला की याद आ जाती है और वह विह्वल हो उठता है। साँतवे अङ्क में स्वर्ग से विजय प्राप्त कर दुष्यन्त के लौटने के क्रम में मारीच आश्रम में अपने पुत्र तथा प्रियतमा से मिलता है और मारीच के आशीर्वाद के साथ नाटक का सुखान्त समापन होता है।

इस प्रकार महाकवि कालिदास ने अपने विषय में यद्यपि प्रत्यक्षतः कोई सूचना नहीं दी फिर भी उनकी रचनाओं और अन्य कवियों की उनके प्रति व्यक्त किये गए उद्गारों के फलस्वरूप हम उन्हे जानने का प्रयास करते हैं।

जगजीवन कॉलेज, आरा